पेरिस
मार्च १२, २००६

सन्देश संख्या १६३

अकर्ता में ताओ–कर्ता का उदय

नैष्यकर्म्यसिद्धिं परमां सन्न्यासेनाधिगच्छति ।
(भगवद्गीता १८/४६)

परस्पर विपरीतों से मुक्त, प्रतिक्रिया रहित, विभाजन रहित, द्वन्द्व रहित, तनाव रहित, विकल्प रहित सजगता (साक्षी) की अग्नि में ही 'मैं'का दहन और अकर्त्तापन का प्रकटन घटित होता है और तभी भगवान रूपी कर्ता द्वारा जीवन का संचालन होता है । जल रूपी अहंकार जब 100० C तापक्रम पर वाष्पीकृत होता है तभी समझदारी रूपी वाष्प की सर्वत्र व्याप्ति होती है ।

विचार और प्रतिक्रिया कभी स्वतन्त्र नहीं होते और प्रतिक्रिया में किया गया, कार्य कितना भी बुद्धिमत्ता पूर्ण क्यों न लगे, वह मूर्खतापूर्ण ही होती है । आनन्द प्राप्ति का उद्देश्य रखना, वस्तुतः आनन्द की हत्या करना है । परन्तु दुःख का हमेशा एक कारण होता है, प्रत्येक आँसू मन का होता है, समय का होता है ।

अपने ऊपर दया भाव, पुरानी स्मृतियों की पुनरावृत्ति, अवसाद और दुःख समय रूपी मिट्टी में अंकुरित और विकसित होते हैं। 'जो है' या 'तथ्य' में दुःख नहीं होता अपितु उसकी छाया में होता है अर्थात् उससे सम्बन्धित विचारों में होता है । तथ्य समय से परे होता है लेकिन तथ्य विषयक विचार समय के अधीन होता है ।

अनुभव पूर्व धारणाओं को मजबूती प्रदान करते हैं तथा पहले से ज्ञात का और विस्तार करते हैं । प्रत्येक अनुभव ज्ञात की प्रतिक्रिया है, और वह ज्ञात अर्थात् अतीत के द्वारा ही पहचाना जाता है । प्रत्येक अनुभव जीवन की जीवन्तता यानी कि वर्तमान को तिमिराच्छादित कर देता है, नष्ट कर देता है तथा स्मृति को अपने बन्धनों में जकड़ लेता है । फिर भी, 'आध्यात्मिक अनुभवों' और 'आत्म–साक्षात्कार' को प्रचारित करने वाली पुस्तकें क्षुद्रमन की सनकी दुनिया में सबसे अधिक बिकती हैं ।

'अनुभवातीत' होने की तथा अस्तित्वगत असीमता की सुगन्ध सर्वत्र व्याप्त है । किन्तु मन्दिरों, मस्जिदों तथा गिरिजाघरों में जलने वाली उत्तेजक अगरबत्तियों में वह पवित्र सुगंध नहीं होती । तुम उसे अपनी स्मृति में कैद नहीं कर सकते यद्यपि कि वह तुम्हारे साथ ही रहती है । परन्तु वह तुम्हारे साथ तभी होती है जब तुम अपने त्वं–भाव के साथ नहीं होते । स्थिरता या शान्ति इतनी पूर्ण होती है, मानो, समय समाप्त हो गया हो । वह सर्वत्र व्याप्त है तथा शक्ति और सौन्दर्य में अद्वितीय है । किन्तु इसके बोध के लिए, तुम्हें बिना किसी उद्देश्य या प्रयोजन के मरना होगा, प्रतिदिन पूर्ण विकसित होना होगा और प्रतिदिन मरना होगा, ताकि पुनः पुनः जन्म हो सके । निर्मलता और ऊर्जा हमेशा मृत्यु अर्थात् विचारों की समाप्ति में ही घटित होती है और इस मृत्यु के साथ ही उस अमरता का, अनन्तता का, उस अद्वितीयता एवं अपरिमेयता का आविर्भाव होता है ।

निःशब्दता की ध्वनि को उत्पन्न करने वाले पत्तों, फूलों एवं पक्षियों की क्या उपयोगिता है? तुम इस संग्रही मनोवृत्ति वाले समाज के प्रति, इसके चर्चों मन्दिरों, सरकारों, तथाकथित धार्मिकों, क्रान्तिकरियों या पाखंडी 'सील–पैथाइजर्स' के लिए इतने उपयोगी क्यों हो? ऐसे सभी उपद्रवों के प्रति पूर्णरूपेण अनुपयोगी हो जाओ ।

।। अनुपयोगिता की जय हो ।।